ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

❖ दर्शनशास्त्र (प्रतिष्ठा)

अनात्मवाद या नैरात्मवाद (NO-SOUL THEORY)

चार्वाक को छोड़कर अन्य सभी भारतीय दर्शनों में आत्मा को नित्य, शाश्वत, अमर तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। बौद्ध दर्शन का अनात्मवाद का सिद्धान्त आत्मा सम्बन्धी परम्परागत मतों से भिन्नता एवं विपरीतता को दर्शाता है। अनात्मवाद का सिद्धान्त बौद्ध दर्शन के कारणता–सिद्धान्त प्रतीत्यसमुत्पाद की तार्किक परिणति है।

अनात्मवाद के अनुसार आत्मा नित्य, शाश्वत, अमर नहीं है अपितु वह भी सांसारिक वस्तुओं की भाँति परिवर्तनशील है। यदि अनात्मवाद के शाब्दिक एवं संकीर्ण अर्थ को लिया जाए तो अनात्मवाद का आशय आत्मा के अस्तित्व के खंडन या उसकी अस्तित्वविहीनता होगा। ऐसी स्थिति में यह सिद्धान्त उच्छेदवाद के समतुल्य होगा। ऐसा मानने पर मध्यमा प्रतिपदा के उनके सिद्धान्त का खंडन हो जाएगा। अतः अनात्मवाद का यह अर्थ अस्वीकार्य है।

बुद्ध के अनुसार शाश्वत आत्मा मन और शरीर का संकलन या समुच्चयमात्र है। इस संकलन में भी प्रतिक्षण परिवर्तन होता रहता है।

गीता, न्याय–वैशेषिक, वेदान्त आदि दर्शनों में यह माना गया है कि शरीर के परिवर्तन और विनाश होने पर भी आत्मा की नित्य सत्ता बनी रहती है। वही सत्ता एक शरीर के नष्ट होने पर दूसरे शरीर में प्रवेश करती है। बुद्ध ऐसे किसी नित्य, अपरिवर्तनशील सत्ता का स्वीकार नहीं करते। यहाँ स्वभावतः यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि यदि आत्मा को नित्य न माना जाए तो फिर पुनर्जन्म की व्याख्या कैसे संभव है?

बौद्धमतानुसार जीवन विभिन्न क्रमबद्ध एवं परिवर्तनशील अवस्थाओं का प्रवाह है। इसमें एक अवस्था की उत्पत्ति उसकी पूर्ववर्ती अवस्था से होती है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में पूर्व–अपर संबंध रहता है जो कारण–कार्य के नियम पर आधारित है। परिणामस्वरूप संपूर्ण जीवन में एकरूपता एवं निरंतरता दिखाई देती है। यहाँ इसे स्पष्ट करने के लिये ज्योति की लौ का उदाहरण दिया गया है। ज्योति की लौ प्रतिक्षण परिवर्तित होती रहती है, उनमें भिन्नता भी होती है परन्तु बाहर से देखने पर अविच्छिन्न रूप से दिखाई देता हैं। पुनः एक ज्योति से दूसरी ज्योति को प्रकाशित किया जा सकता है। दोनों ज्योतियाँ एक–दूसरे से भिन्न हैं, पृथक हैं, परन्तु उनमें कारण–कार्य का संबंध है। इसी प्रकार, जीवन की अंतिम अवस्था से भविष्य जीवन की प्रथम अवस्था की उत्पत्ति हो सकती है। ये दोनों जीवन पृथक–पृथक होंगे, परन्तु इनमें कारण–कार्य

HEMCHANDRA KUMAR

सम्बंध होगा। स्पष्ट है कि यहाँ पुनर्जन्म का आशय आत्मा का एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश करना नहीं है, बल्कि पूर्व के कर्म–संस्कारों का ही विज्ञान के रूप में प्रकट होना है।

पंचस्कन्ध

बौद्ध धर्म उपदेशक नागसेन 'मिलिन्दप्रश्न' में आत्मा के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार धुरी, चक्के, रस्सियों, घोड़े आदि के संघात–विशेष को 'रथ' कहा जाता है उसी तरह से पंचस्कन्धों की समष्टि का नाम आत्मा है। आत्मा पंचस्कन्धों का संघात है। ये पांच स्कन्ध है– रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार, और विज्ञान। ये स्कन्ध आत्मा के घटक है। इनमें रूपस्कन्ध आत्मा का भौतिक घटक है और वेदना स्कन्ध, संज्ञा स्कन्ध, संस्कार स्कन्ध और विज्ञान स्कन्ध उसके मानसिक घटक है। इस प्रकार आत्मा भौतिक एवं मानसिक तत्वों की समष्टि का नाम है। रूप स्कन्ध में मनुष्य के शरीर के जो आकर, इन्द्रियाँ, रंग आदि हैं वे सब रूप के अन्दर आते हैं। वेदना स्कन्ध के अन्तर्गत सुखात्मक, दुःखात्मक एवं उदासीन, इन तीनों प्रकार की भावनाओं का समावेश किया जाता है। संज्ञा स्कन्ध में अनेक प्रकार के ज्ञान आते हैं। रूप, वेदना और संज्ञा के बीच समन्वय करने वाली मानसिक शक्ति को संस्कार कहते हैं। विज्ञान स्कन्ध में चेतना की गणना की जाती है। ये पंचस्कन्ध ही आत्मा के अवयव हैं। इन स्कन्धों के परिवर्तनशील होने के कारण आत्मा भी सदैव परिवर्तनशील है। पाश्चात्य विचारक विलियम जेम्स ने भी आत्मा को विज्ञानों का प्रवाह (Stream of Consciousness) कहा है।

नैरात्मयवाद दो प्रकार का है–(1) पुद्गलनैरात्मय (2) धर्मनैरात्मय

(1) पुद्गल नैरात्मय का आशय है कि न तो कोई स्थिर या शाश्वत भौतिक वस्तु है और न ही कोई नित्य आत्मा। पुद्गल या जीवात्मा की केवल व्यावहारिक सत्ता है। वस्तुतः वह अनात्म अर्थात् सापेक्ष है। इस ज्ञान से क्लेशावरण का क्षय होता है। हीनयान केवल पुद्गल नैरातम्य में विश्वास करता है।

(2) धर्मनैरात्म्य के अनुसार धर्म या पदार्थ भी व्यावहारिक है। वे भी अनात्म या सापेक्ष है। इस ज्ञान से ज्ञेयावरण दूर होता है। क्लेशावरण और ज्ञेयावरण के नाश से निर्वाण प्राप्त होता है।

बौद्ध दर्शन का अनात्मवाद उनके मध्यम मार्ग के अनुकूल है। अनात्मवाद न तो चार्वाक की तरह आत्मा का पूर्णतया खण्डन करता है (उच्छेदवाद) और न ही वेद और उपनिषद् के आत्मा तत्व की तरह नित्य आत्मा का समर्थन करता है (शाश्वतवाद) आत्मा वस्तुतः पंचस्कन्धों का संघात है जिसमें सदैव परिवर्तन होता रहता है। इस प्रकार अनात्मवाद, उच्छेदवाद और शाश्वतवाद के मध्य की स्थिति को इंगित करता है।

HEMCHANDRA KUMAR

अनात्मवाद के सिद्धि के तर्क (आत्मा की अमरता के खण्डन के तर्क)

(1) संचालकः शरीर का संचालन आत्मा के द्वारा होता है। यदि आत्मा अपरिवर्तनशील है तो फिर शरीर के संचालन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। अतः आत्मा सदैव परिवर्तनशील है।

(2) क्षणिकवाद पर आधारित तर्कः क्षणिकवाद के अनुसार विश्व की प्रत्येक वस्तु प्रतिक्षण परिवर्तनशील है। यह सिद्धान्त आत्मा पर भी लागू होता है। अतः आत्मा भी प्रतिक्षण परिवर्तनशील है।

(3) कर्मनियम की व्याख्याः यदि आत्मा नित्य, अपरिवर्तनशील, स्थाई तत्व है तो वह किसी कर्म का सम्पादन नहीं कर सकती। इसलिए वह फल के लिए भी उतरदायी नहीं हो सकती। आत्मा न पुण्य–कर्म और न पाप कर्म कर सकती है। अतः उसे न दण्ड मिलेगा न पुरस्कार। स्पर्ष्ट है कि दण्ड व पुरस्कार की सार्थकता को व्याख्यायित करने के लिए आत्मा को परिवर्तनशील मानना आवश्यक है।

अनात्मवाद के अनुसार कर्म कर्त्ता द्वारा किया जाता है। उसका फल कर्त्ता के ही परवर्ती रूपान्तरित रूप को मिल जाता है। स्पष्ट है कि कर्मनियम की व्याख्या के लिए आत्मा को परिवर्तनशील मानना आवश्यक है।

(4) पुनर्जन्म की व्याख्याः स्थाई एवं नित्य आत्मा न तो मर सकती है, न जन्म ले सकती है। ऐसी स्थिति में उसके नित्य अस्तित्व को मानकर उसके पुनर्जन्म की तार्किक व्याख्या नहीं की जा सकती। एक तरफ आत्मा को नित्य मानना तो दूसरी तरफ उसके पुनर्जन्म की बात स्वीकार करना विरोधाभासी है। अतः आत्मा का परिवर्तनशील मानना आवश्यक है।

यहाँ पुनर्जन्म का आशय नित्य आत्मा का एक शरीर छोड़कर नया शरीर ग्रहण नहीं है, बल्कि विज्ञान के अविच्छिन्न प्रवाह की निरन्तरता है। इसके अनुसार वर्तमान जीवन की अंतिम अवस्था से भविष्य जीवन की प्रथम अवस्था की उत्पत्ति हो जाती है। यहाँ मृत्यु का अर्थ है– एक विज्ञान (विचार) प्रवाह का समाप्त होना और पुनर्जन्म का अर्थ इस विज्ञान प्रवाह का नये शरीर में निरन्तरता कायम रखना है। जिस प्रकार एक दीपक से दूसरा दीपक प्रकाशित किया जाता है, उसी तरह हमारे विज्ञान एवं कर्म–संस्कार एक जीवन से दूसरे जीवन में पहुंचते हैं।

(5) मोक्ष व बंधन की व्याख्याः यदि आतमा नित्य, शाश्वत व स्वनिर्भर है, तो उसकी दो ही स्थितियाँ हो सकती हैं– (1) शुद्ध आत्मा, (2) अशुद्ध आत्मा। यदि आत्मा शुद्ध है तो उसे कभी बंधन में नहीं पड़ना चाहिए और यदि अशुद्ध है तो मोक्ष प्राप्ति की व्याख्या नहीं हो सकती।

HEMCHANDRA KUMAR

(6) आत्मा को नित्य मानने पर लाभ नहीं: नित्य आत्मा को मानने पर जीवन में आसक्ति बढ़ती है। राग, द्वेष, मोह आदि का प्रसार होता है। बुद्ध के अनुसार शाश्वत आत्मा में विश्वास उसी प्रकार हास्यास्पद है जिस प्रकार कल्पित सुन्दर नारी के प्रति अनुराग रखना हास्यास्पद है।

(7) मत भिन्नता: यदि आत्मा नित्य, शाश्वत व अमर होती तो उसके स्वरूप के संदर्भ में इतनी मताभिन्नता नहीं होती। उदाहरणस्वरूप– सांख्य दर्शन अनेक पुरूषों की बात करता है, शंकर एकात्मवादी है। रामानुजाचार्य आत्मा को अनेक रूप मानते है परन्तु वह विभू न होकर अणु है, जैनियों ने जीव को अनेक माना है, परन्तु वे शरीर परिमाणी हैं। यहाँ बौद्धों के अनुसार वस्तुतः आत्मा परिवर्तनशील है। हम केवल नित्य आत्मा संबंधी मन की कल्पनाओं का आरोपण उस पर कर देते हैं।

(8) वर्तमान मनोविज्ञान: एक विशेष संदर्भ में आधुनिक मनोविज्ञान आत्मा (भौतिक एवं मानसिक घटक) की परिवर्तनशीलता को स्वीकार करता है। इसके अनुसार व्यक्तित्व अपरिवर्तनशील, अविच्छेद इकाई नहीं है, अपितु बुद्धि, स्वभाव, शरीर, विभिन्न रसायनों व तत्वों का विभिन्न परिस्थितियों से प्राप्त गतिशील संगठन है।

(9) आनुवांशिकता के आधार पर: आनुवांशिक विज्ञान के अनुसार माता–पिता के गुण उसके संतानों में आ जाते हैं। बौद्ध दर्शन में इसकी व्याख्या संस्कार एवं विज्ञान (चेतना) के आधार पर की गई है। इससे भी आत्मा की परिवर्तनशीलता (द्वाद्वश निदान के दो अंग) सिद्ध होती है। अतीत जीवन के संस्कार से वर्तमान जीवन में सर्वप्रथम चेतना की स्थिति उभरकर सामने आती है।

आलोचना:

(i) यदि नित्य आत्मा को नहीं माना जाए तो फिर प्रश्न उठता है कि 'आत्मा नहीं है' ऐसा कहने वाला कौन तत्व है। शंकराचार्य के अनुसार आत्मा का निराकरण करने वाला ही अपने अस्तित्व की सिद्धि करता है।

(ii) सब कुछ परिवर्तनशील है, ऐसा तभी संभव है जब हमें यह भी पता हो कि कोई अपरिवर्तनशील तत्व है

(iii) कर्म–नियम की सम्यक्रूपेण व्याख्या नहीं हो पाती है।

(iv) स्मृति एवं ज्ञान की व्याख्या तर्कतः नहीं हो पाती है।

(v) यदि नित्य आत्मा के अस्तित्व को न माना जाए तो फिर निर्वाण का महत्व और उसकी प्राप्ति का प्रयास व्यर्थ हो जायेगा।

HEMCHANDRA KUMAR

महत्व : (1) अनात्मवाद की अवधारणा बौद्धों के मध्यम मार्ग के अनुकूल है।

(2) अनात्मवाद को मानने पर राग–आसक्ति की भावना को दूर करने में मदद मिलती है।

HEMCHANDRA KUMAR